आधुनिक हिन्दी उपन्यासों में अस्पृश्यों की जागृति और अस्मिता

ए.शौकत अली
*असोसियेट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग एस.डी.जी.एस कालेज, हिन्द्रपुर-*515201
जिला अनन्तपुरम, आन्ध्र प्रदेश, भारत ।

सारांश

अस्मिता यानी अपने अस्तित्व को मानवीय रूप में अनुभव करने और करवाने की संकल्पना है । मैं मनुष्य हूँ और मनुष्य की भाँत समाज में रहने का अधिकारी हूँ, मेरी अस्मिता सुरक्षित रहे । संभवत: यही वह चेतना है जो आज चेतना से पूर्ण अस्पृश्यों के सामस्थ, प्रतिभा, दक्षता को सिध्द करती है । सन् 1950 के बाद लेखकों ने अस्पृश्यों की जागृति और अस्मिता का प्रश्न उठाया है । इन अस्पृश्यों का शोषण हर क्षेत्र में हुआ और लेखकों ने उनके शोषण की दु:ख भरी गाथा करने के साथ-साथ उनकी जागृति और अस्मिता को भी रेखांकित किया है ।

अस्पृश्यों की जागृति से हमारा अभिप्राय सदियों से पीड़ित, संत्रस्त, शोषित अस्पृश्य वर्ग का अन्धकार से उजाले की ओर जाना, अज्ञान से ज्ञान की ओर बढ़ना, अन्याय के खिलाफ़ आवाज़ उठाना, अपनी अस्मिता को पहचानना, दुख से सुख की ओर जाना है ।

सामाजिक जागृति की आवश्यकता उसी समय होती है, जब समाज में एक वर्ग के लोग निरंकुश एवं विलासी होते हैं और दूसरे वर्ग के लोग कष्टों एवं संकटों में अपना जीवनबिताते रहते हैं । इस दूसरे वर्ग के लोग अपने कष्टों तथा संकटों का दोष भाग्य को देते हैं, तो वहाँ जागृति का जन्म होना संभव नहीं होता। भारत के समाज में हम देखते हैं कि शुरू से स्पृश्य समाज अस्पृश्यों का सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक दृष्टि से शोषण करता रहा है, मगर इधर के वर्षों में संविधान के विभिन्न प्रावधानों से यह अस्पृश्य वर्ग अवगत हो रहा है । साथ में शिक्षा के प्रति सजगता आने के कारण उतना अज्ञान आजकल नहीं रह गया है, जितना पहले था । अपने हकों और अधिकारों के बारे में इस वर्ग में जागृति पैदा हो रही है ।

भारत के समय-समय पर जितने भी महापुरुष और सुधारक हुए उन सभी ने इस वर्ग में चेतना भरते का भरपूर प्रयत्न किया है , और उन्हें सम्मानपूर्ण जीवन जीने को कहा है । कालान्तर में शिक्षा का प्रभाव भी इस जागृति में महत्वपूर्ण रहा है । यह जागृति हर क्षेत्र में होने लगी, धार्मिक संकर्णता टूटती गयी, शास्त्रों का पुन: अध्ययन प्रारम्भ हुआ, सत्य की खोज की गयी । महात्मा गाँधीजी और डा. बाबासहेब अम्बेडकर ऐसे महापुरुष थे, जोन्होंने अस्पृश्यों के उध्दार की बात को लेकर देश भर में अभियान शुरू किया ।

स्पृश्य वर्ग द्वारा किये गये परम्परागत शोषणों द्वारा अस्पृश्य वर्ग में जो जड़ता यी थी और प्ररिकूल परिस्थितियों में अस्पृश्य जातियों की अधोगति हुई थी, उसे समाज-सुधारकों की विचारधारा ललकारने लगी । परिणामत: अस्पृश्यों में अपने मानविचुत अधिकारों को प्राप्त करने के लिए संघर्ष करने की जागृति उत्पन्न होने लगी । स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी उपन्यासों में ऐसे जागृत पात्रों द्वारा उन अस्पृश्यों में भी जागृति लाने का प्रयत्न हुआ है, जो अज्ञान के अंधकार में हैं ।

मूल शब्द: अन्याय, शोषण, समाज, विलासी, चेतना

प्रस्तावना

आज के इस युग में हिन्दू समाज-व्यवस्था और धर्म द्वारा रूढ़किये गये तत्वों को यथावत अब अस्पृश्य समाज मान लेने को तैयार नहीं है । हिन्दू धर्म, कर्म सिध्दान्त को प्रमाण मानता है । अस्पृश्य समाज के युवक यह मानने को तैयार

नहीं है कि उन्हें पूर्वजन्म के कर्मों के कारण आज का अस्पृश्य जीवन प्राप्त हुआ है । पुनर्जनन्म जैसे सिध्दान्तों को अस्पृश्य समाज की नई पीढ़ी अस्वीकार करती है । अमृतलाल नागर जी के 'नाच्यौ बहुत गोपाल' में अस्पृश्य वर्ग की नीलम निर्गण मोहन धार्मिक मान्यताओं को ठुकराती हुई कहानी है - "आप बुजुर्ग आदमी हैं, धर्म जिस तरह से आप लोगों को टच करता है उस तरह हमारी न्यू जेनरेशन को नहीं करता ।"[1]

नव अस्पृश्य समाज विध्वंस और नवसृजन दोनों की चेतनाओं को साथ लेकर चलने का आकांक्षी है । वह जीर्ण, रूढ़ और मानवताविनासी मान्यताओं तथा पुरातन परम्पराओं की निष्प्राणता से चिपके रहने के बजाय संघर्ष द्वारा उनका विध्वंस चाहता है । वह पुरानी व्यवस्था की जगह नूतन निर्माण चाहता है, जो नव युग और नई सामाजिक आवश्यकताओं को दृष्टि में रखकर संपन्न होता है । प्रस्तुत उपन्यास की नीलम निगृाण मोहन परम्परागत मान्यताओं का तिरस्कार और नूतन निर्माण की मांग करती प्रतीत होती है - "जैसे आज नीली साड़ी पहनी, कला पीली, परसों गुलाबी । इस तरह से कांहए तो धर्म रोज ही बदलती रहूँ । धर्म तो उन लोगों का ढकोसला है जो अपने आपको ऊंची जात का मानते हैं।"[2] धार्मिक भ्रष्टाचारों को देखकर अस्पृश्यों युवा पीढ़ी क्रोधित हो भ्रष्ट धर्म को ठुकराने लगी है । नागरजी जो यह मानते है कि अब अस्पृश्यों में जागृति हो रही है । उनके शब्दों में "ये लडकों का दोष नहीं है । हमारी श्रध्दा ही खोखली हो गयी है जिन लोगों से आप के वर्ग को सदा लांछन और अपमान ही मिले हों, उनके प्रांत स्वाधिकार की चेतना जाग उठने के बाद अश्रध्दा और अद्विश्वास उत्पना होना स्वाभ्विक ही है ।"[3]

परस्परागत ऊंच नीच के भेद-भाव ने अस्पृश्य समाज पर अंकुश का काम किया, धर्म तथा नैतिकता की नंगी तलवार के नीचे अस्पृश्य समाज सदा भयभीत रहा । अस्पृश्य स्त्रियों के साथ स्पृश्य समाज मनमाने अत्याचारों अन्याय करता था । फिर भी अस्पृश्य समाज विवश और मौन होकर सहता रहा, किन्तु आधुनिक युग में इसका विरोध करके कुलीनों के अत्याचारों के प्रति विद्रोह करने की हिम्मत बढ़ने लगी है । प्रस्तुत उपन्यास का अस्पृश्य मोहन स्पृश्य समाज के प्रति अपना आक्रोश प्रकट करते हुए कहता है - "मुझे नफरत है इन सब ऊंची कौमवालों से। साले सोहबत शौक में हमारी औरतों को अकेले में दबोचलेते हैं । सातों करम करके बाहर से उजले बनते है और फिर उन्हीं से जो बच्चे होते हैं, उन्हें छूते हुए भी घिनाते हैं । मेरा बस चले तो एक दिन छावनी के सारे तोपखाने के इन सरीफ और बड़े आदमी कहलाने वाले जल्लादों की बिस्तयों पर लगवाकर इन हिन्दू, मुसलमानों, क्रिस्चेनों को एक साथ धडाम-धडाम उडवा दूँ । इन साले हरामियों की ।"[4] मोहन के इस आक्रोश में अस्पृश्य वर्ग में हो रही जागृति का स्पष्ट रूप दिखाई देता है ।

धर्म के नाम पर कर्म करने वाले स्पृश्यों के खिलाफ़ अस्पृश्य युवा पीढी विद्रोह करती है और उन्हें ऐसा सबक सिखाना चाहती है कि भविष्य में ऐसे अधर्म का कार्य न करें । इसी उपन्यास में अस्पृश्यों द्वारा चलाये जाने वाले सत्यनारायण के जुलूस को धर्म भ्रष्ट कर्य घोषित करते हुए सनातनी जब उसका विरोध करते हैं, तब अस्पृश्य नव पीढ़ी से सहा नहीं जाता । युवक कहने लगते है - "बांध लो लाले टोडी बच्चों को । ढोंगी धर्म के ठोकेदारों को और जो जो हरिजन भई इस जुलूस में शामिल हो, आगे बढ़के इन साले सनातनियों को दो-दो झांपड़ लगाएँ । तभी इनकी अकल ठीक होगी । और आज हम इन धर्मदूतों का पाखंड चूर-चूर करेंगे ।"[5]

जब तक जुल्म सहा जाता है तब तक जुल्मकिया जाता है । इसलिए जुल्मों के खिलाफ़ विद्रोह करना अत्यंत आवश्यक है । जगदीशचन्द्र के 'धरती धन न अपना' उपन्यास में अस्पृश्यों से स्पृश्य वर्ग मजदूरी दिये बिना कृषि संबंधी काम लेता है, उनका खूब शोषण करता है । अस्पृश्य काली यह अनुभव करता है कि सहने से शोषण और बढ़ जाता है । इसलिए उनके खिलाफ़ विद्रोह करने का फैसला करता है । वह चौधरी से कहता है - "मैं बिना पैसों के काम नहीं करूँगा । मैं किसी के पास गिरवी नहीं पडा हूँ जो बेकार करूँ ।"[6] शोषण के खिलाफ संघर्ष करना है तो अस्पृश्यों को अनेक खतरों से भी लड़ना पड़ता है । लड़ने की शाक्त अस्पृश्यों में होनी चाहिए । अत: प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने अस्पृश्यों में ऐसी शस्क्ति भरने के लिए एक डाक्टर द्वारा कहलावाया है - "इन्कलाबी नारे का मतलब यह है कि फाके काटकर, गोलियाँ खाकर और जिंदगी को हथैली पर रखकर संघर्ष किया जाय।"[7]

स्वतंत्रता के बाद अस्पृश्यों में शोषण के खिलाफ न केवल विद्रोह की भावना जागी है बल्कि उस के साथ बदले की भावना भी जागृत हो गयी है । इसी उपन्यास का अस्पृश्य तयाबसंता अपनी जातवाली नारी की इज्जत के साथ खेलने वाले स्पृश्यों से बदला लेना चाहता है । वह कहता है - "हमारी बहू बेटियों की बेइज्जती करनेवाले ये कौन होते हैं । हम उनकी बहूबेटियों की बेइज्जती करेंगे ।"[8] अस्पृश्यों में जैसे जागृति बढ़ने लगती है तो वैसे वे अपने मानवोचित अधिकारस के लिए संघर्ष करने लगे हैं । प्रस्तुत उपन्यास का डाक्टर इस यथार्थ का बोध कराता है - "उसे अपने अधिकारों का अहसास हो गया है । चमार अब जाट का रोब बरदास्थ नहीं करेगा ।"[9] स्वतन्त्रता के बाद परम्परा के प्रति अस्पृश्यों की विद्रोही भावना विकसिक हुई है । अस्पृश्यों का यह विद्रोह समाजिक विश्रृंखलाओं के कारण उत्पन्न असंतोष है । अस्पृश्य समाज

के लोग समानता एवं न्याय के लिए हड़ताल भी करने लगे हैं । अमृतराय के 'बीज' में मेहतर लोग इसी प्रकार हड़ताल करते हैं - ''हम हड़ताल करने के लिए नहीं करते हम शक्ति पूर्ण तरीकों से मामले को सुलझाना चाहते हैं और आप भी इसी चीज़ केलिए जोर लगाइये । हम कोई धांधली नहीं करना चाहते, हम जानते हैं कि सचाई हमारे साथ है और आप के सामने भी उसे रखने के लिए तैयार हैं, लेाकन अधिकारी अगर शुरू से ही सुलह का रास्ता बन्द कर देंगे, तो फिर आप ही बताइये हम और क्या करें ? आप की गंदगी साफ़ करते हैं, क्या हमें भर पेट खाना मांगने का भी हक नहीं है अपनी बहु बेटियों का तन ढंकने के लिए कपड़ा माँगने का भी हक नहीं है ।''[10]

शिक्षित अस्पृश्य युवा पीढ़ी में अपने अधिकारों को प्राप्त करने के लिए संघर्ष करने की प्रवृत्ति दिखाई देने लगी है । फणीश्वरनाथ रेणु के 'परती परकथा' का अस्पृश्य युवक जयमंगल ऐसे ही अधिकार के लिए संघर्ष करता है । वह कहता है - ''कहाँ लिखा हुआ है, किस कानून की किताब में लिखा हुआ है कि भासन, लेक्चर सिर्फ ऊँची जातिवाला ही देगा'' ।[11]

अब अस्पृश्य नारी भी शिक्षा ग्रहण करने लगी है । उसमें भी जागृति उत्पन्न हो रही है । प्रस्तुत उपन्यास में रेणु ने अस्पृश्य समाज की मलारी को शिक्षित बनाकर अस्पृश्य नारी में जागृति का रूप दर्शाया है - ''ताजमनी और मलारी जैसी सुन्दर कन्याएँ उनके घर नहीं पैदा हुई, आज तक, दो दीपों की तरह जगमगा रही है दोनों । एक नट्टिन टोली में, दूसरी मोची टोली के बीच । मलारी ने गाँव के स्कूल से मिडिल पास किया है । हाई इंग्लिश स्कूल में नाम लिखाकर तीन महिना क्लास में भी गयी । महीचीने रैदास की बेटी को कौन नहीं जानता ।''[12]

अस्पृश्य समाज आखिर कब तक स्पृश्यों द्वारा किये जाने वाले शोषण को सहता रहेगा, जब शोषण अपनी चरम सीमा पार कर लेता है तो उसका विरोध ही हो जाता है । मधुकर सिंह के 'जंगली सुअर' का रघुनी चमार कुलीन रामनाथ भाई के शोषण का विरोध करता है - ''मेरे पास आपका कुछ भी बकाया नहीं हैं, मैं अब इसके लिए आप के दरबाजे पर नहीं जाऊँगा । जो भी आप जुलूम करे देखा जायेगा ।''[13] अब गाँव के अस्पृश्य भी अपनी अस्मिता को पहचान रहे हैं। प्रस्तुत उपन्यास के लेखक इस ओर ध्यान आकर्षित करते हैं कि ''आज इनके खिलाफ़ गाँव का चमार भी बोल रहा है यह बदले हुए जमाने का नतीजा है।''[14] सदियों से शोषित अस्पृश्य समाज अब अन्याय और शोषण का विरोध करने के साथ-साथ न्याय चाहता है । इसी उपन्यास में शोषक विश्वनाथ सिंह को जमानत पर छोड़ने पर गाँव के लगभग दस हज़ार अस्पृश्य इकट्ठे होकर एक लम्बा जुलूस निकालते हैं और एस पी और कलक्टर का घेराव करके उनके सम्मुख अपनी तीन माँगे रखते हैं - ''अपराधी विश्वनाथ सिंह को फांसी दो धीरा और गंभीरा के परिवार को जीने का साधन दो, हरिजनों पर जुल्म बन्द हों ।''[15]

पहले स्पृश्यों द्वारा अस्पृश्य नारी की इज्जत लूटी जाती थी, किन्तु अब अस्पृश्य नारियों में भी इस अन्याय के कर्जा को चुकाने की भावना उत्पन्न होने लगी है । यह नारी इज्जत लूटने वाले उन दरिन्दों को सबक सिखाना चाहती हैं प्रस्तुत उपन्यास में ऐसा ही अस्पृश्य नारी - विद्रोह का वर्णन किया गया है - ''जब वह खेतों से होकर मन्दिर पर लौटने लगी तो भाईजी कुत्ते की तरह पीछे लग गए । अरहर की आड में और खलिहार के झुरमुटों के पास एकांत मिला तो उन्होंने पीछे से लपक कर सनीचर बहू का हाथ पकड़ लिया । बेचारे रामनाथ भाई की सनीचर बहू के साथ दूसरी कोशिश थी । भय से उनका चेहरा फक था। मगर जबरन दांत निपौरे जा रहे थे । उन्होंने आरी से नीचे खिंचना चाहा तो सनीचर बहू ने छती के भीतर से कटार निकालकर चला दी । भाईजी की बांह शरीर से अलग तो नहीं हुई, परन्तु बुरी तरह घायल हो गए ।''[16]

अस्पृश्यों पर राजनैतिक चाल चलाकर उनका शोषण किया जाता था, किन्तु, अस्पृश्यों की नई पीढ़ी उनके शोषण का डटकर विरोध करती है । मन्मथनाथ गुप्त के 'अपराकित' में कुलीनों के संकुचित विचारों का विरोध हुआ है । अस्पृश्य समाज का माधव, संकुचित विचारवाले स्पृश्य चमूपति के प्रस्ताव का विरोध करते हुए कहता है - ''नहीं, मैं इसका विरोध कर रहा हूँ, यह तो बात ब्रिटीश सरकार भी कहती है कि वह हिन्दुओं की संस्था है, मुसलमानों की नहीं, यही तो बात लीग कहती है कि कांग्रस हिन्दुओं की संस्था है, मुसलमानों की नहीं, आप लोग उसी का समर्थन करने जा रहे हैं । मेरा संशोधन यह है कि जहाँ-जहाँ इस प्रस्ताव में हिन्दू शब्द आया है, वहाँ-वहाँ भारतीय शब्द रखा जाय । महात्माजी सब भारतीयों के नेता हैं, केवल हिन्दुओं के नहीं ।''[17]

उपसंहार

भारतीय समाज में एक ऐसा युग था जब अस्पृश्यों को एकदम पाँवों तले रौंदा जाता था । इन्हें मनुष्य तक मानने की सहनशीलता कुलीन वर्गों में नहीं थी। हजारों वर्षों तक यह प्रवृत्ति चलती रही, मगर स्वाधीनता के बाद उनके जीवन की कथा बदलने लगी । संविधान के मूलभूत सिध्दान्तों ने इनकों अन्य वर्गों के समकक्ष रखा । महात्मा गाँधीजी तथा डा. बाबा साहेब अम्बेडकर जैसे आधुनिक युग के चिन्तकों ने इनके जीवन में नयी चेतना भरने का प्रयत्न

किया। इस सर्वहार वर्ग में आत्म सम्मान और आत्म-विश्वास जगाने का प्रयास किया। गाँधी और अम्बेडकर से प्रभावित लेखकों ने अपने साहित्य के माध्यम से इस वर्ग को न्याय देने का प्रयास किया। नीलम निर्गुनू, जहमंगल, रघुनी, माधव, बावनराम, रामउजागर तथा अनुकूल आदि पात्रों के माध्यम से साहित्यकारों ने जहाँ एक ओर उनके जागृत होने का संकेत किया है, उसी क्षण उनकी अस्मिता को भी रेखांकित किया है। वास्तव में मनुष्य का जागृत होना ही उसकी आस्मिता का सवाल लेकर आता है। प्रस्तुत आलेख में मैं ने स्वातंत्र्योतार उपन्यासों में अस्पृश्यों की इसी जागृत और अस्मिता को रेखांतिक करने का प्रयास किया है।

संदर्भ सूंचः

1. नाच्यौ बहुत गोपाल - अमृतलाल नागर पृ. 33
2 नाच्यौ बहुत गोपाल - अमृतलाल नागर - पृ. 34.
3. नाच्यौ बहुत गोपाल - अमृतलाल नागर - पृ. 317
4. नाच्यौ बहुत गोपाल - अमृतलाल नागर - पृ. 117
5. वही - पृ. 248
6. मैं इससे सहमत धन न अपना - जगदीशचन्द्र - पृ. 272
7. मैं इससे सहमत धन न अपना - पृ. 280
8. मैं इससे सहमत धन न अपना - पृ. 282
09. वही - पृ. 202
10. बीज - अमृतराय - पृ. 412
11. परती परिकथा - फणीश्वनाथ रेणु - पृ. 96
12. वही - पृ. 84
13. जंगली सुअर - मधुकर सिंह - पृ. 91
14. जंगली सुअर - मधुकर सिंह - पृ. 72
15. जंगली सुअर - मधुकर सिंह - पृ. 100
16. जंगली सुअर - मधुकर सिंह - पृ. 111
17. अपराजित - मन्मथनाथ गुप्त - पृ. 235